इकाई 2 सुबन्त प्रकरण – अजन्त पुँल्लिङ्ग (उकारान्त, ऋकारान्त) साधु, पितृ

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 साधु शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

2.3 साधु शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

2.4 पितृ शब्द रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

2.5 पितृ शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

2.6 विशेष नियम, अपवाद, वार्तिक

2.7 सारांश

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.9 अभ्यास प्रश्न

2.0 उददेश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- लघुसिद्धान्तकौमुदी के अजन्त पुँल्लिङ्ग प्रकरण से परिचित हो सकेंगे।
- उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु शब्द को सूत्रों की व्याख्या सहित समझ सकेंगे।
- साधु एवं पितृ की प्रथमा विभक्ति एकवचन से सप्तमी बहुवचन तक की रूपसिद्धि को क्रमशः समझ सकेंगे।
- इन शब्दों के सन्दर्भ स्थित विशेष नियम अपवाद, वार्तिक को भी समझ पाएंगे।
- इन पदों के समान अन्य पदों को भी समझ सकेंगे; जैसे कि – साधु के समान गुरु, बाहु, लघु, कटु आदि एवं पितृ के समान भ्रातृ, जामातृ, विधातृ, सवितृ आदि।

2.1 प्रस्तावना

प्रिय शिक्षार्थियो! अजन्त पुँल्लिङ्ग प्रकरण के अन्तर्गत अकारान्त राम, आकारान्त विश्वपा, इकारान्त हरि, ईकारान्त बहुश्रेयसी आदि के पश्चात् उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु एवं ऋकारान्त पितृ को समझना अपेक्षित है। साधु शब्द उणादि 'उण्' प्रत्ययान्त है जो साध (साध्) धातु से

बना है जिसका संसिद्धि अर्थ है। पितृ शब्द भी पा धातु से तृच् एवं इत्व का निपातन करके उणादि सूत्र से निष्पादित किया गया है।

इससे पूर्व के सुबन्त प्रकरण की अन्य इकाइयों की तरह, यहाँ भी रूपसिद्धि की प्रक्रिया प्रदर्शित की जायेगी। पूर्ववर्ती रूपसिद्धियों में प्रयुक्त बहुत सारे सूत्र यहाँ भी यथावत् लगेंगे। प्रातिपदिक संज्ञा, प्रत्यय एवं उसका पर प्रयोग प्रातिपदिक के अधिकार में सु, औ, जस् आदि प्रत्ययों का विधान, विभक्ति एवं वचन, संज्ञा एवं उनका विधान, स को रु एवं रु (र्) का विसर्ग, एक शेष व्यवस्था, इत्व सम्बन्धी व्यवस्था, सम्बोधन में प्रथमा, सम्बुद्धि संज्ञा, अङ्ग संज्ञा आदि सारी विधियाँ यहाँ भी यथावत् होंगी अतः इनसे सम्बन्धित सूत्रों को यहाँ व्याख्यायित नहीं किया गया है। यहाँ केवल साधु एवं पितृ शब्द में प्रयुक्त होने वाले कुछ विशिष्ट सूत्रों की ही व्याख्या प्रदर्शित की जायेगी।

2.2 साधु शब्द की रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – इको यणचि 6/1/77

वृत्ति – इकः स्थाने यण् स्यादचि संहितायां विषये।

अर्थ एवं व्याख्या – 'इकः' पष्ठी एकवचन, 'यण्' प्रथमा एकवचन, तथा 'अचि' सप्तमी एकवचन है। अनुवृत्ति संहितायाम्। संहिता का विषय होने पर 'इक्' के स्थान पर 'यण्' आदेश होता है 'अच्' परे होने पर। यहाँ सूत्र में तीनों पद प्रत्याहारों से सम्बन्धित हैं– इक् = इ, उ, ऋ, लृ। यण् = य,व,र,ल्। अच् = अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ। अच् अपने सवर्णियों का भी बोध करायेंगे। वर्णों की अत्यन्त समीपता को संहिता कहते हैं, अर्थात् सन्धि विषय। होने वाला आदेश स्थान सादृश्य की अपेक्षा रखता है। इ, उ, ऋ, लृ के स्थान पर होने वाले य, व, र, ल वर्ण उच्चारणस्थान की दृष्टि से समान हैं, जैसे इ, य का उच्चारण स्थान तालु है। उ, व, का ओष्ठ, ऋ, र का मूर्धा, तथा लृ, ल का दन्त स्थान होता है।

यह एक सामान्य सूत्र है। इस विधि सूत्र के अनेक अपवाद हैं इसलिए सन्धि की स्थिति में जहाँ और कोई सन्धि प्राप्त नहीं होगी वहीं यह सूत्र प्रक्रिया काम करेगी। साधु+औ, साधु+जस् (अस्), साधु+अस्, साधु+शस् (अस्), साधु+ङे (ए) आदि स्थलों में यण् सन्धि नहीं हो पायेगी। साधु+ओस् में कुछ प्राप्त नहीं है अतः यहाँ यण् होकर साध्वोस् = साध्वोः रूप सिद्ध हो जायेगा।

सूत्र – तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य 1/1/66

वृत्ति – सप्तमी निर्देशेन विधीयमानं कार्यं वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य पूर्वस्य बोध्यम्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'तस्मिन्' सप्तमी एकवचन, 'इति' अव्ययपद, 'निर्दिष्टे' सप्तमी एकवचन, 'पूर्वस्य' षष्ठी एकवचन है। सप्तमी विभक्ति के निर्देश से किया जा रहा कार्य अव्यवहित पूर्व के स्थान पर होता है। पाणिनीय सूत्रों में तत् सर्वनाम में प्रयुक्त विभक्ति उस विभक्ति का परिचायक होती है, जैसे सूत्र में तत् की सप्तमी विभक्ति 'तस्मिन्' का निर्देश किया गया है तो 'तस्मिन् इति निर्दिष्टे' का अर्थ 'सप्तमी निर्देश से' ऐसा अर्थ होगा। इस प्रकार सप्तमी का

पाठ होने पर निर्दिष्ट से अव्यवहित पूर्व को कार्य होगा। सप्तमी का अर्थ पर भी है अतः निर्दिष्ट के परे रहते निर्दिष्ट से ठीक पहले अर्थात् अव्यवहित पूर्व को कार्य होगा, जैसे 'इको यणचि' में 'अचि' में सप्तमी है– 'अच्' सप्तमी निर्दिष्ट है। अतः 'अच्' परे रहते इसी 'अच्' से ठीक पूर्व में स्थित 'इक्' वर्ण के स्थान पर यणादेश होगा। 'साधु ओस्' में ओ से अव्यवहित पूर्व 'इक्' वर्ण 'उ' को व् – यण् होगा, अतः 'साध् व् ओस्–साध्वोस = साध्वोः रूप बनेगा। 'स्थानेऽन्तरतमः' कहा है, अतः स्थान सादृश्य का ध्यान रखा जायेगा।

सूत्र – स्थानेऽन्तरतमः 1/1/50

वृत्ति – प्रसंगे सति सदृशतम आदेशः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'स्थाने' सप्तमी एकवचन, 'अन्तरतमः' प्रथमा विभक्ति एकवचन। प्रसंग उपस्थित होने पर सदृशतम वर्ण का आदेश होता है। स्थान का अर्थ प्रसंग है जैसे दर्भ का प्रसंग होने पर अर्थात् दर्भ न हो, दर्भ का प्रसंग हो तो उस के स्थान पर शर = शरकण्डा के पत्तों से काम चलाना चाहिए। जैसे आर्धधातुक विषय में अस् के प्रसंग, अस् के स्थान पर भू आदेश, ब्रू को वच्, आदेश इत्यादि होते हैं।

प्रस्तुत सूत्र में 'स्थाने' पद पर पढ़ा गया है पुनरपि पूर्वसूत्र से स्थाने की अनुवृत्ति मानी गयी है। जो आदेश होगा वह अन्तरतम होगा। 'स्थाने' के होने पर भी 'स्थाने' की अनुवृत्ति को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि जहाँ अनेक प्रकार की सदृशता हो, वहाँ उच्चारणस्थान की सदृशता मानी जायेगी। सदृशता चार प्रकार की होती है – स्थानकृत, (उच्चारण स्थानादि), अर्थकृत, गुणकृत और प्रमाणकृत। व्याकरण में इन सबका यथास्थान आधार लिया जाता है। किसी स्थल में एक से अधिक सदृशता प्राप्त हो वहाँ स्थान सादृश्य बलवान् होगा। जैसे 'साधु ङे (ए)' की स्थिति में 'घेर्ङिति' से गुण प्राप्त होने पर 'उ' के प्रमाणानुसार 'अ' गुण प्राप्त हो सकता है परन्तु सूत्र में स्थान सादृश्य का उल्लेख होने से कण्ठ स्थनीय 'उ' के स्थान पर कण्ठोष्ठ गुणवर्ण 'ओ' होता है। 'साधु ओस्' में ओष्ठ स्थानीय उ' के स्थान पर ओष्ठ स्थानीय 'व्' ही यणादेश के रूप में होता है।

सूत्र – अलोऽन्त्यस्य 1/1/52

वृत्ति – षष्ठीनिर्दिष्टस्याऽन्त्यस्यालः आदेशः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अलः' षष्ठी एकवचन, 'अन्त्यस्य' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– षष्ठी, स्थाने। षष्ठी विभक्ति से निर्दिष्ट अर्थात् षष्ठयन्त पद से निर्दिष्ट के स्थान पर जो आदेश हो वह सम्पूर्ण पद के स्थान पर न होकर अन्तिम अल् (वर्ण) के स्थान पर होता है, जैसे 'साधवे' में 'घेर्ङिति' से षष्ठी निर्दिष्ट साधु अंग को गुण प्राप्त होने पर साधु के अन्तिम अल 'उ' को गुण होगा। वह स्थानसादृश्य के अनुसार होगा।

सूत्र – एचोऽयवायावः 6/1/78

वृत्ति –एचः क्रमाद् अय् अव् आय् आव् एतेस्युरचि।

अर्थ एवं व्याख्या – 'एचः' षष्ठी एकवचन। 'अयवायावः' प्रथमा बहुवचन। अनुवृत्ति– संहितायाम्, अचि। 'अच्' (स्वर) परे होने पर 'एच्' (ए ओ ऐ औ) के स्थान पर क्रमशः अय्, अव्, आय्, आव् आदेश होते हैं – संहिता विषय में। यह भी सामान्य सूत्र है। पूर्वरूप आदि इसके अपवाद हैं।

सूत्र – यथासंख्यमनुदेशः समानाम् 1/3/10

वृत्ति – समसम्बन्धी विधिर्यथासंख्यं स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'यथासंख्यम्' अव्ययपद, 'अनुदेशः' प्रथमा एकवचन, 'समानाम्' षष्ठी बहुवचन। स्थानी और आदेश समान संख्या में हों तो आदेश संख्याक्रम से होता है; जैसे 'एच्' चार हैं। अय् अव् आय् आव् भी चार हैं। अतः आदेश क्रम से होगा – ए को अय्, ओ को अव्, ऐ को आय्, औ को आव् आदेश होंगे।

सूत्र – प्रथमयोः पूर्वसवर्णः 6/1/102

वृत्ति – अकः प्रथमा द्वितीययोरचि पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेशः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'प्रथमयोः' षष्ठी द्विवचन,' पूर्वसवर्णः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अकः, अचि। अक् = अ, इ, उ, ऋ, ऌ से उत्तर प्रथमा एवं द्वितीया विभक्ति का अच् (स्वर) परे हो तो पूर्व एवं पर वर्ण के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होता है। यहाँ दो वर्णों के स्थान पर एकवर्ण होगा परन्तु यह पूर्ववर्ण का सवर्ण होगा और वह दीर्घ वर्ण होगा, जैसे साधु+औ, साधु+शस् (अस्) में यह सूत्र लगेगा। यहाँ पूर्व में उ है तो उसका सवर्ण दीर्घ वर्ण ऊ है, अतः उ+औ= ऊ (साधू), उ+औ = ऊ (साधून्) रूप बनेगा।

सूत्र – जसि च 7/3/109

वृत्ति – ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'जसि' सप्तमी एकवचन, 'च' अव्ययपद। अनुवृत्ति– ह्रस्वस्य, गुणः, अङ्गस्य। जस् परे रहते ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है। जैसे साधु+जस्, साधु+अस्। इस स्थिति में यण् आदेश, पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त है। परन्तु इस सूत्र से गुण का विधान किया गया है, अतः स्थान सादृश्य से अन्तरमय गुण वर्ण 'ओ' होकर साधो+अस्, पुनः अव् आदेश होकर साधवस् = साधवः रूप बनेगा।

सूत्र – अमि पूर्वः 6/1/107

वृत्ति – अकोऽम्यचि पूर्वरूपमेकादेशः ।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अमि' सप्तमी एकवचन, 'पूर्वः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अकः, अचि, एकः, पूर्वपरयोः। अक् – अ इ उ ऋ ऌ से उत्तर अम् सम्बन्धी अच् परे होने पर पूर्व और पर वर्ण के स्थान पूर्वरूप एकादेश होता है। पर वर्ण पूर्ववर्ण का रूप धारण कर लेगा। इसी को पूर्वरूप कहा जाता है। साधु+अम् = साधुम् रूप बनेगा। यहाँ भी यणादेश एवं पूर्वसवर्ण दीर्घ प्राप्त था, इस सूत्र से पूर्वरूप का विधान कर दिया जाता है।

सूत्र – तस्माच्छसो नः पुंसि 6/1/103

वृत्ति – पूर्वसवर्णदीर्घात् परो यः शसः सस्तस्य नः स्यात् पुंसि।

अर्थ एवं व्याख्या – 'तस्मात्' पञ्चमी एकवचन, 'शसः' षष्ठी एकवचन, 'नः' प्रथमा एकवचन, 'पुंसि' सप्तमी एकवचन, 'तस्मात्' शब्द पूर्ववर्ती सूत्र में पठित पूर्वसवर्ण शब्द की ओर संकेतित है। इसका अर्थ होगा– पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर 'शस्' के स् के स्थान पर नकारादेश होता है, पुँल्लिङ्ग में। 'अलोऽन्त्यस्य' के अनुसार 'शस्' के अन्तिम अल् स् को न् होगा। पहले पूर्वसवर्ण दीर्घ एवं पश्चात् नकारादेश होगा, जैसे साधु+शस्, साधु+अस्, साधूस् = साधून्। इसी तरह पितृन् में भी रूपसिद्धि को निरूपित किया जाता है।

सूत्र – ह्रस्वस्य गुणः 7/3/108

वृत्ति – सम्बुद्धौ (ह्रस्वस्य गुणः)

अर्थ एवं व्याख्या – 'ह्रस्वस्य' षष्ठी एकवचन, 'गुणः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, सम्बुद्धि। सम्बुद्धि अर्थात् सम्बोधन के एकवचन के प्रत्यय 'सु' के परे रहते ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है। हे साधो! में स्थान सादृश्य के आधार पर उ को ओ गुण होगा।

सूत्र – शेषोघ्यसखि 1/4/7

वृत्ति – शेष इति स्पष्टार्थम्। अनदीसंज्ञौ ह्रस्वौ याविदुतौ तदन्तं सखिवर्ज घिसंज्ञम्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'शेषः' प्रथमा एकवचन, 'घि' प्रथमा एकवचन, 'असखि' प्रथमा एकवचन। घि और असखि पद के विशेषण हैं अतः नपुंसकलिङ्ग में ये समझे जाने चाहिए। अनुवृत्तिः यू, ह्रस्वः। सखि शब्द को छोड़कर, नदी संज्ञक से भिन्न जो ह्रस्व इकारान्त तथा उकारान्त शब्द हैं उनकी घि संज्ञा होती है।

इस सूत्र से पूर्व नदी संज्ञा का प्रकरण है। जिनकी नदी संज्ञा नहीं की गयी है वह शेष हैं। स्त्री आख्या वाले ईकारान्त, ऊकारान्त, इकारान्त, उकारान्त की नदी संज्ञा की गयी है, तो पुँल्लिङ्ग एवं नपुंसकलिङ्ग के इकारान्त, उकारान्त की घि संज्ञा होती है। सखि शब्द की घि संज्ञा नहीं की गयी है क्योंकि इस शब्द की रूप रचना भिन्न प्रकार की है और उसके लिए पृथक् व्यवस्था है। पति शब्द इकारान्त पुँल्लिङ्ग है, परन्तु समासगत पति शब्द की ही घि संज्ञा की गयी है। जैसे सेनापति, प्रजापति की घि संज्ञा होती है।

सूत्र – आङो नाऽस्त्रियाम् 7/3/120

वृत्ति –घेः परस्याङो ना स्यादस्त्रियाम्। आङ् इति टासंज्ञा।

अर्थ एवं व्याख्या – 'आङः' षष्ठी एकवचन, 'ना' प्रथमा एकवचन, 'अस्त्रियाम्' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– घेः, अङ्गस्य। स्त्रीलिङ्ग से भिन्न घि संज्ञक अङ्ग से उत्तर आङ् अर्थात् तृतीया एकवचन टा के स्थान पर ना आदेश होता है। टा की प्राचीन आचार्यो ने आङ् संज्ञा मान रखी थी– आङ् टाङ् बुद्धया। इस सूत्र से साधु+टा = साधुना रूप बन जायेगा।

सूत्र – घेर्ङिति 7/3/111

वृत्ति – घिसंज्ञकस्य ङिति गुणः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'घेः' षष्ठी एकवचन, 'ङिति' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– गुणः, सुपि, अङ्गस्य। सुप् सम्बन्धी ङित् प्रत्यय परे घि संज्ञक अङ्ग को गुण होता है। सुप् में ङित् प्रत्यय ङेः, ङसि, ङस्, ङि हैं। कोई बाधक कार्य प्राप्त न हो तो इन प्रत्ययों के परे गुण होगा। जैसे साधु+ङे = साधो ए = साधव् ए = साधवे।

सूत्र – ङसिङसोश्च 6/1/110

वृत्ति –एङो ङसिङसोरति पूर्वरूपमेकादेशः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ङसिङसोः' षष्ठी द्विवचन, 'च' अव्यय पद। अनुवृत्ति– एङ्, अति, पूर्वः एकः, पूर्वपरयोः। एङ् (ए, ओ) से उत्तर ङसि और ङस् का ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व और पर वर्ण के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होता है। साधु ङसि = साधु अस् = साधो अस् = साधोस् = साधोः। इस प्रकार ङस् में भी साधोः रूप ही बनेगा।

सूत्र – ह्रस्वनद्यापो नुट 7/1/54

वृत्ति – ह्रस्वान्ताद् नद्यन्ताद् आबन्ताच्चाङ्गात् परस्यामो नुडागमः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ह्रस्वनद्यापः' पञ्चमी एकवचन, 'नुट्' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, आमि। ह्रस्वान्त, नद्यन्त तथा आबन्त अङ्ग से उत्तर 'आम्' को नुट् आगम होता है। ह्रस्व स्वर अन्त वाला ह्रस्वान्त, नदी संज्ञक शब्द तथा आप् (स्त्रीलिंग में विहित टाप्, चाप्, डाप्) अन्त वाला आबन्त हैं। नुट् आगम टित् है अतः विहित के आदि में होगा। टित् आगम विहित के आदि में और कित् आगम विहित के अन्त में होते हैं। यहाँ आम् को नुट् आगम विहित है अतः आम् से पूर्व में होकर नाम् जैसा रूप बनेगा। जैसे साधु+नुट् आम्, साधु नाम् = साधूनाम्। इसी तरह पितृणाम् भी सिद्ध होगा।

सूत्र – नामि 6/4/3

वृत्ति – अजन्तस्याङ्गस्य दीर्घः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'नामि' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– दीर्घः, अचः, अङ्गस्य। नाम् अर्थात् नुट् सहित आम् परे रहते अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है। जैसे साधु नाम् = साधूनाम्, पितृ नाम् = पितृणाम्। नाम् परे न हो तो दीर्घ नहीं होता, जैसे करिन् आम् = करिणाम्, योगिन् आम् = योगिनाम्।

सूत्र – अच्च घेः 7/3/119

वृत्ति – इदुद्भ्यामुत्तरस्य ङेरौत्, घेरत्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अत्' प्रथमा एकवचन, 'च' अव्ययपद, 'घेः' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– इदुद्भ्याम्, औत् ङेः, अङ्गस्य। ह्रस्व इकारान्त व उकारान्त अंग से उत्तर ङि के स्थान पर औ तथा घि संज्ञक के अन्तिम अल् के स्थान पर ह्रस्व अकारादेश होता है। जैसे साधु ङि = साधु औ = साध औ = साधौ रूपसिद्धि होता है।

2.3 साधु शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

1) साधुः – साधु शब्द औणादिक उण् प्रत्ययान्त है अतः 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक होने पर 'ङयाप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि 21 प्रत्यय प्राप्त हुए, 'विभक्तिश्च' से तीन–तीन के समूह की विभक्ति संज्ञा हुई, 'सुपः' से 'सु, औ, जस्' आदि त्रिक की क्रमशः एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन संज्ञा होने पर 'प्रातिपदिकार्थलिङ्ग परिमाण वचनमात्रे प्रथमा' सूत्र से प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति प्राप्त हुई, 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, 'साधु सु' इस स्थिति में 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से उपदेश में विद्यमान अनुनासिक 'अच्' उकार की इत्संज्ञा एवं 'तस्य लोपः' से इत्संज्ञक उकार का लोप, 'साधु स्' इस अवस्था में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से अवसान स्थित रेफ को विसर्ग होकर 'साधुः' रूप सिद्ध होता है।

2) साधू – उकारान्त साधु शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'साधु औ' इस अवस्था में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु परकार्य होने से 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से 'अक्' (उ) से उत्तर प्रथमा सम्बन्धी 'अच्' (औ) परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'साधू' रूप सिद्ध होता है।

3) साधवः – उकारान्त साधु शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, 'चुटू' से 'ज्' की इत् संज्ञा एवं 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'साधु अस्' इस अवस्था में 'इको यणचि' सूत्र से यणादेश प्राप्त था, परन्तु 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'जसि च' सूत्र से 'जस्' परे रहने ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होकर 'साधो अस्', 'एचोऽयवायावः' से अच् परे रहते 'ओ' के स्थान पर अवादेश करके पूर्ववत् सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग करने पर 'साधवः' रूप सिद्ध होता है।

4) साधुम् – उकारान्त साधु शब्द से द्वितीय विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'अम्' प्रत्यय, 'साधु अम्' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु उसे बाधकर 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त हुआ, उसे भी बाधकर 'अमिपूर्वः' सूत्र से अक् से उत्तर 'अम्' सम्बधी 'अच्' के परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश होकर 'साधुम्' रूप सिद्ध होता है।

5) साधू – उकारान्त साधु शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय, 'ट्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'साधु औ' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु परकार्य होने से 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'साधू' रूप सिद्ध होता है।

6) साधून् – उकारान्त साधु शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय, 'हलन्त्यम्' से सकार की इत् संज्ञा प्राप्त हुई, जिसका 'न विभक्तौ तुस्माः' से निषेध, 'लशक्वतद्धिते, से प्रत्यय के आदि शकार की इत् संज्ञा तथा 'तस्य लोपः' से लोप होकर 'साधु अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः से 'उ' से उत्तर द्वितीया सम्बन्धी

'अ' परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश हुआ, 'साधूस्' अब 'तस्माच्छसो नः पुंसि' सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर 'शस्' के सकार को नकार आदेश होकर 'साधून्' रूप सिद्ध होता है।

7) साधुना – उकारान्त साधु शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'टा' प्रत्यय, 'साधु टा' इस अवस्था में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से 'साधु शब्द की घि' संज्ञा होने पर 'आङो नाऽस्त्रियाम्' सूत्र से स्त्रीलिंग से भिन्न 'घि' संज्ञक 'साधु' से परे 'आङ्' (तृतीया एकवचन 'टा') के स्थान पर 'ना' आदेश होकर 'साधुना' रूप सिद्ध होता है।

8) साधुभ्याम्– उकारान्त साधु शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'साधुभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) साधुभिः – उकारान्त साधु शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्., सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय, 'साधु भिस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'साधुभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) साधवे – उकारान्त साधु शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट.' सूत्र से 'ङ' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्धलोप होकर 'साधु ए' इस अवस्था में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से ह्रस्व उकारान्त 'साधु' शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'घेर्ङिति' सूत्र से 'घि' संज्ञक अङ्ग को गुण हुआ। 'साधो ए' अब 'एचोऽयवायावः' सूत्र से अच् के परे रहते 'ओ' को 'अव्' आदेश होकर 'साधवे' रूप सिद्ध होता है।

11) साधुभ्याम् – उकारान्त साधु शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'साधुभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) साधुभ्यः – उकारान्त साधु शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, 'साधु भ्यस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से विसर्ग होकर 'साधुभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) साधोः – उकारान्त साधु शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौसमौट्.' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय, पूर्ववत अनुबन्ध लोप होकर 'साधु अस्' इस स्थिति में 'शेषो घ्यसखि' सूत्र से साधु शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'घेर्ङिति' सूत्र से ङित् 'अस्' के परे रहते 'उ' को 'ओ' गुण हुआ। 'साधो अस्' अब 'ङसिङसोश्च' से 'एङ्' से उत्तर 'ङस्' का ह्रस्व अकार परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश, 'साधो स्' 'ससजुषो रुः' से सकार को रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'साधोः' रूप सिद्ध होता है।

14) साधुभ्याम् – उकारान्त साधु शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'साधुभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) साधुभ्यः – उकारान्त साधु शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय होकर 'साधु भ्यस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान

पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'साधुभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) साधोः – उकारान्त साधु शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ङस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'साधु अस्' इस स्थिति में 'शेषो घ्यसखि' से साधु शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'घेर्ङिति' से गुण, 'साधो अस्, अब 'ङसिङसोश्च' से पूर्वरूप एकादेश, 'साधोस्' पूर्ववत् रुत्व एवं विसर्ग होकर 'साधोः' रूप सिद्ध होता है।

17) साध्वोः – उकारान्त साधु शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'ओस्' प्रत्यय होकर 'साधु ओस्' इस स्थिति में 'इको यणचि' सूत्र से 'उ' के स्थान पर 'व्' आदेश तथा पूर्ववत् सकार के रुत्व एवं विसर्ग होकर 'साध्वोः' रूप सिद्ध होता है।

18) साधूनाम् – उकारान्त साधु शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'आम्' प्रत्यय, 'साधु आम्' इस स्थिति में 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से ह्रस्वान्त अङ्ग साधु से उत्तर 'आम्' को 'नुट्' आगम्, 'टित्' होने के कारण 'नुट्' आगम आदि में हुआ। 'साधु नुट् आम्' इस अवस्था में पूर्ववत् अनुबन्धलोप तथा 'नामि' सूत्र से नाम् के परे रहते अजन्त अङ्ग को दीर्घ होकर 'साधूनाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) साधौ – उकारान्त साधु शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'ङि' प्रत्यय, 'साधु ङि' इस अवस्था में 'शेषो घ्यसखि' से 'साधु' शब्द की 'घि' संज्ञा होने पर 'अच्च घेः' सूत्र से ह्रस्व उकारान्त अङ्ग से उत्तर 'ङि' को 'औ' आदेश तथा 'घि' संज्ञक 'साधु' के अन्तिम 'अल्' उकार के स्थान पर अकारादेश हुआ। 'साध् अ औ, अब 'वृद्धिरेचि' से अवर्ण से उत्तर एच् परे रहते पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश होकर 'साधौ' रूप सिद्ध होता है।

20) साध्वोः– उकारान्त साधु शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'ओस्' प्रत्यय, 'साधु ओस्' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश तथा पूर्ववत् विसर्गकार्य होकर 'साध्वोः' रूप सिद्ध होता है।

21) साधुषु – उकारान्त साधु शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'सुप्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप होकर 'साधु सु' इस स्थिति में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से 'इण्' (उ) से उत्तर प्रत्यय के अवयव अपदान्त सकार को मूर्धन्य (षकार) आदेश होकर 'साधुषु' रूप सिद्ध होता है।

22) हे साधो – उकारान्त साधु शब्द से 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार् में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय, 'सम्बोधने च' से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति तथा 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकत्व की विवक्षा में एकवचन संज्ञक 'सु' प्रत्यय होकर 'साधु सु' इस स्थिति में अनुबन्धलोप तथा 'एकवचनं सम्बुद्धिः' से सम्बोधन के एकवचन 'सु' की 'सम्बुद्धि' संज्ञा होने पर 'ह्रस्वस्य गुणः' सूत्र से सम्बुद्धि परे रहते ह्रस्वान्त अङ्ग के 'उ' को गुण हुआ। 'हे साधोस्' अब 'एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' से एङन्त से उत्तर सम्बुद्धि के सकार का लोप होकर 'हे साधो!' रूप सिद्ध होता है।

23) हे साधू – उकारान्त साधु शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'हे साधु औ' इस अवस्था में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर 'हे साधू!' रूप सिद्ध होता है।

24) हे साधवः – उकारान्त साधु शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति तथा बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'जस्' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'हे साधु अस्' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश प्राप्त था, परन्तु पूर्ववत् 'जसि च' से गुण 'एचोऽयवायावः' से अवादेश करके सकार को रुत्व एवं रेफ को विसर्ग करने पर 'हे साधवः!' रूप सिद्ध होता है।

उकारान्त पुल्लिङ्ग साधु शब्द

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथामा विभक्ति	साधुः	साधू	साधवः
द्वितीया विभक्ति	साधुम्	साधू	साधून्
तृतीया विभक्ति	साधुना	साधुभ्याम्	साधुभिः
चतुर्थी विभक्ति	साधवे	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
पञ्चमी विभक्ति	साधोः	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
षष्ठी विभक्ति	साधोः	साध्वोः	साधूनाम्
सप्तमी विभक्ति	साधौ	साध्वोः	साधुषु
सम्बोधन	हे साधो	हे साधू	हे साधवः

2.4 पितृ शब्द रूपसिद्धि में प्रयुक्त सूत्रों की व्याख्या

सूत्र – ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः 7/3/110

वृत्ति – ऋतोऽङ्गस्य गुणो ङौ सर्वनामस्थाने च।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋतः' षष्ठी एकवचन 'ङिसर्वनामस्थानयोः; सप्तमी द्विवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, गुणः। ङि और सर्वनामस्थान संज्ञक प्रत्यय (सु, औ, जस्, अम्, औट् प्रत्यय नपुंसक भिन्न) के परे रहते ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग को गुण होता है। पितरौ, पितरः, पितरम् में इस सूत्र से गुण होकर उक्त रूप बनेंगे। सु परे अङ्ग आदेश होता है जिससे पिता रूप बनता

सूत्र – ऋदुशनस्पुरुदंशोऽनेहसाञ्च 7/1/94

वृत्ति – ऋदन्तानामुशनसादीनां चानङ् स्यादसम्बुद्धौ सौ।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋदुशनस्पुरुदंशोऽनेहसाम्' षष्ठी बहुवचन, 'च' अव्यय पद। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, अङ्ग, सौ, असम्बुद्धौ। ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग को तथा उशनस्, पुरुदंशस् अनेहस्

अङ्गों को सम्बुद्धि (सम्बोधन) भिन्न सु परे रहते अनङ् आदेश होता है। यह कार्य प्रथमा विभक्ति एकवचन से सम्बन्धित है। अनङ् आदेश ङित् (ङ् इत् वाला) होने से 'ङिच्च' सूत्र से अन्तिम अल् के स्थान पर होता है, जैसे पिता रूप बनाते समय – पितृ सु = पित् अनङ् स् = पितन् स् = पितान् स् = पितान् = पिता प्रक्रिया अपनाई जाती है।

सूत्र – अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा 1/1/65

वृत्ति – अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अलः' पञ्चमी एकवचन, 'अन्त्यात्' पञ्चमी एकवचन, 'पूर्वः', 'उपधा' प्रथमा एकवचन। समुदाय के अन्तिम वर्ण से ठीक पूर्व में स्थित वर्ण की उपधा संज्ञा होती है, जैसे पिता में पितन् स् की स्थिति में पितन् एक समुदाय है, इसका अन्तिम वर्ण 'न' है। इससे ठीक पूर्व में 'त' का 'अ' उपधा संज्ञक होगा। आगे नान्त की उपधा का दीर्घ का विधान किया गया है– पितन् स् = पितान् स्, पितान् = पिता।

सूत्र – सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ 6/4/8

वृत्ति – नान्तस्योपधाया दीर्घोऽसम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने।

अर्थ एवं व्याख्या – 'सर्वनामस्थाने' सप्तमी एकवचन, 'च' अव्यय पद, 'असम्बुद्धौ' सप्तमी एकवचन। अनुवृत्ति– अङ्गस्य, नः, उपधायाः, दीर्घः। सम्बुद्धि भिन्न (सम्बोधन का 'सु' सम्बुद्धि कहलाता है, उससे भिन्न सर्वनामस्थान (नपुंसक भिन्न सुट्) परे रहते नकारान्त अंग की उपधा को दीर्घ होता है। जैसे पितन् स् की स्थिति में न् की उपधा अ को दीर्घ होगा– पितान् अ् = पितान् = पिता।

सूत्र – अपृक्त एकाल्प्रत्ययः 1/2/41

वृत्ति – एकाल्प्रत्ययो यः, सोऽपृक्त संज्ञः स्यात्।

अर्थ एवं व्याख्या – 'अपृक्तः', 'एकाल्', 'प्रत्ययः' ये तीनों प्रथमा एकवचन के पद हैं। ऐसा प्रत्यय जिसमें अन्ततः एक अल् (वर्ण) शेष रह गया हो, उसकी अपृक्त संज्ञा होती है। अपृक्त संज्ञा होने से उसका 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से लोप हो जाता है– जैसे पितान् स् में स् अपृक्त है, उसका लोप हो जायेगा। यह स् को रुत्व करने वाले सूत्र का अपवाद है।

सूत्र – हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् 6/1/66

वृत्ति – हलन्तात् परं दीर्घो यौ ङयापौ तदन्ताच्च परं सुतिसित्येतद् अपृक्तं हल् लुप्यते।

अर्थ एवं व्याख्या – 'हल्ङ्याब्भ्यः' पञ्चमी बहुवचन, 'दीर्घात्' पञ्चमी एकवचन, 'सुतिस्यपृक्तम्', 'हल्' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– लोपः। हलन्त से उत्तर तथा ङी, आप् दीर्घान्त से उत्तर (ङ्यन्त, आबन्त दीर्घान्त स्थिति में हों तब) सु–ति–सि प्रत्यय अपृक्त अवस्था में आ गये हों तो उस अपृक्त का लोप हो जाता है। पितान् स् की स्थिति में इस सूत्र से अपृक्त स् का लोप हो जायेगा।

सूत्र – न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य 8/2/7

वृत्ति – प्रातिपदिकसंज्ञं यत् पदं तदन्तस्य नस्य लोपः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'न' यह लुप्त षष्ठयन्त पद है अर्थात् यहाँ षष्ठी विभक्ति का लोप जानना चाहिए। 'लोपः' प्रथमा एकवचन, 'प्रातिपदिकान्तस्य' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– पदस्य। प्रातिपदिक संज्ञा वाले 'पद' के अन्त में स्थित 'न्' का लोप होता है, जैसे पितान् में न् का लोप होकर पिता बनेगा।

सूत्र – उरण रपरः 1/1/51

वृत्ति – ऋ इति त्रिंशतः संज्ञेत्युक्तम्। तत्स्थाने योऽण्, स रपरः सन्नेव प्रवर्तते।

अर्थ एवं व्याख्या – 'उः' षष्ठी एकवचन, 'अण्', 'रपरः' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– स्थाने। 'उः' ऋ वर्ण का षष्ठी एकवचन रूप है। ऋ वर्ण के स्थान पर अण् (अ,इ,उ) होता हुआ ही रपर हो जाता है। गुण, वृद्धि आदि जब ऋ के स्थान पर होते हैं तो उस दशा में अण् वर्ण रपर सहित होता है। अण् होने के बाद रपर नहीं होता, अपितु र सहित होता है। 'र' प्रत्याहार माना गया है जिस में र, ल, दो वर्ण आते हैं। गुण सन्धि आदि में अ+ऋ = अर्, अ+ॡ = अल् होगा। जहाँ ऋ को सामान्य गुण या वृद्धि होगा वहाँ अर्, आर् जैसे रूप होंगे। पितृ+औ = पित् अर औ = पितरौ रूप होगा। कृ+ण्यत् = क् आर् य = कार्यम् रूप होगा।

सूत्र – ऋत उत् 6/1/107

वृत्ति – ऋतो ङसिङसोरति उद् एकादेशः। रपरः।

अर्थ एवं व्याख्या – 'ऋतः' पञ्चमी एकवचन, 'उत्' प्रथमा एकवचन। अनुवृत्ति– ङसिङसोः, अति, एकः पूर्वपरयोः, संहितायाम्। ऋकारान्त से उत्तर ङसि और ङस् का ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व व पर के स्थान पर उकार एकादेश होता है, संहिता विषय में। यह उकार एकादेश 'उरण रपरः' परिभाषा के अनुसार रपर होगा अर्थात् 'उर्' ऐसा एकादेश होगा पितृ+ङसि (अस्) की स्थिति में यणादेश प्राप्त होने पर यह सूत्र प्रवृत्त होगा पितुर स् ऐसा बनेगा। संयोगान्त लोप एवं र् का विसर्ग होकर पितुः रूप बनेगा।

सूत्र – रात् सस्य 8/2/24

वृत्ति – रेफात् संयोगान्तस्य सस्यैव लोपो नान्यस्य। रस्य विसर्गः ।

अर्थ एवं व्याख्या – 'रात्' पञ्चमी एकवचन, 'सस्य' षष्ठी एकवचन। अनुवृत्ति– संयोगान्तस्य, लोपः, पदस्य। संयोगान्त पद के रेफ से उत्तर सकार का ही लोप होगा, अन्य का नहीं। यह नियम सूत्र है। पितुर स् में 'संयोगान्तस्य लोपः' से ही स् का लोप हो जाता, यह सूत्र नियम करता है कि संयोगान्त पद में रेफ से उत्तर 'स' का ही लोप होगा, रेफ से उत्तर संयोगान्त में कोई और वर्ण होगा तो उसका लोप नहीं होगा।

वार्तिक – ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम् यह वार्तिक कौमुदी में ''वर्षाभ्वश्च– 6/4/84'' सूत्र पर पठित है।

सूत्रार्थ – ऋवर्ण से उत्तर न को णत्व कहना चाहिए। र, ष से उत्तर ही 'न' को णत्व प्राप्त था, इस वार्तिक से ऋण से उत्तर भी कह दिया गया। पितृ नुट् आम् = पितृ नाम् = पितृ नाम् = पितॄणाम्।

2.5 पितृ शब्द की रूपसिद्धि की प्रक्रिया

1) पिता – ऋकारान्त पितृ शब्द तृच् प्रत्ययान्त है, अतः 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने से 'ङयाप्प्रातिपदिकात्' सूत्र के अधिकार में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय प्राप्त हुए, पर्वूवत् विभक्ति संज्ञा एवं एकवचनादि संज्ञा होने पर ''प्रातिपदिकार्थलिङ्ग परिमाण वचनमात्रे प्रथमा' सूत्र से प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा विभक्ति प्राप्त हुई, 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय, 'पितृ सु', इस स्थिति में पितृ शब्द के ऋकारान्त होने से 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' से 'ङीप्' प्रत्यय प्राप्त था, परन्तु 'न षट्स्वस्रादिभ्यः' से ङीप् का निषेध तथा अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ स्', अब 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'ऋदुशनस्पुरुदंशोऽनेहसाञ्च', से 'सु' के परे रहते ऋदन्त पितृ अङ्ग को 'अनङ्' आदेश, 'ङिच्च' से अन्तिम अल् 'ऋ' को अनङ् आदेश हुआ। 'पित् अनङ् स्' अनुबन्ध लोप, 'सुडनपुंसकस्य' से 'सु' की सर्वनामस्थान संज्ञा करके 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' से 'न्' की उपधा 'अ' को दीर्घ करने पर 'पितान्स्', इस अवस्था में 'अपृक्त एकाल्प्रत्ययः' से 'स्' की अपृक्त संज्ञा तथा 'हल्ङयाब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' से अपृक्त संज्ञक 'स्' का लोप, 'पितान्' 'न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य' से 'न्' का लोप होकर 'पिता' रूप सिद्ध होता है।

2) पितरौ – ऋकारान्त पितृ शब्द से प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औ' प्रत्यय, 'पितृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् 'ङीप्' का अभाव, 'औ' की 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'पितृ' शब्द के 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' सूत्र से 'ऋ' के स्थान पर रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'पित् अर औ' अब वर्ण–संयोग करने पर 'पितरौ' रूप सिद्ध होता है।

3) पितरः – ऋकारान्त पितृ शब्द से प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'जस्' प्रत्यय, पूर्ववत् ङीप् का निषेध एवं अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ अस्' इस स्थिति में 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा होने पर 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'पितृ' शब्द के 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' सूत्र से ऋ के स्थान पर रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'पितर् अस्', इस अवस्था में 'ससजुषो रुः' से सकार को रुत्व एवं 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितरः' रूप सिद्ध होता है।

4) पितरम् – ऋकारान्त पितृ शब्द से द्वितीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'अम्' प्रत्यय, 'पितृ अम्' इस स्थिति में 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा होने पर 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'पितृ' शब्द के 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' सूत्र से 'ऋ' के स्थान पर रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्ण संयोग करने पर 'पितरम्' रूप सिद्ध होता है।

5) पितरौ – ऋकारान्त पितृ शब्द से द्वितीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'औट्' प्रत्यय, 'ट्' की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् 'सुडनपुंसकस्य' से सर्वनामस्थान संज्ञा, 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'ऋ' को गुण

तथा 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण करके वर्ण संयोग करने पर 'पितरौ' रूप सिद्ध होता है।

6) पितॄन – ऋकारान्त पितृ शब्द से द्वितीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'शस्' प्रत्यय, 'लशक्वतद्धिते' से 'श्' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से द्वितीया सम्बन्धी अच् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश हुआ। 'पितृस्' अब इस अवस्था में पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर 'तस्माच्छसो नः पुंसि' सूत्र से 'शस्' के सकार को नकार आदेश होकर 'पितॄन्' रूप सिद्ध होता है।

7) पित्रा – ऋकारान्त पितृ शब्द से तृतीया विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'टा' प्रत्यय, पूर्ववत् 'ट' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ आ' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश तथा 'स्थानेऽन्तरतमः' सूत्र से उच्चारणस्थान की दृष्टि से 'ऋ' के स्थान पर सदृशतम 'र' आदेश होकर 'पित्रा' रूप सिद्ध होता है।

8) पितृभ्याम् – ऋकारान्त पितृ शब्द से तृतीया विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय, 'पितृभ्याम्' इस स्थिति में 'हलन्त्यम्' से 'म्' की इत् संज्ञा प्राप्त थी, परन्तु 'न विभक्तौ तुस्माः' सूत्र से निषेध होकर 'पितृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

9) पितृभिः – ऋकारान्त पितृ शब्द से तृतीया विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'भिस्' प्रत्यय, 'पितृ भिस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितृभिः' रूप सिद्ध होता है।

10) पित्रे – ऋकारान्त पितृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ङे' प्रत्यय, 'ङ्' की 'लशक्वतद्धिते' से इत् संज्ञा एवं लोप, 'पितृ ए' इस स्थिति में 'इको यणचि' से यणादेश तथा 'स्थानेऽन्तरतमः' से 'ऋ' के स्थान पर सदृशतम 'र्' आदेश होकर 'पित्रे' रूप सिद्ध होता है।

11) पितृभ्याम् – ऋकारान्त पितृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय, 'पितृभ्याम्' इस स्थिति में 'हलन्त्यम्' से प्राप्त इत् संज्ञा का पूर्ववत् 'न विभक्तौ तुस्माः' से निषेध होकर 'पितृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

12) पितृभ्यः – ऋकारान्त पितृ शब्द से चतुर्थी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, पूर्ववत् इत् संज्ञा का निषेध, 'पितृ भ्यस्' इस स्थिति में 'ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितृभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

13) पितुः – ऋकारान्त पितृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'ङसि' प्रत्यय अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ अस्' इस अवस्था में 'अङ्गस्य' के अधिकार में 'ऋतउत्' सूत्र से ह्रस्व ऋकारान्त अङ्ग से उत्तर 'ङसि' का ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर ह्रस्व उकार आदेश, 'उरण रपरः' से रपर होकर 'उर्' ऐसा आदेश हुआ। 'पितुर् स्' की पद संज्ञा होने पर 'पदस्य' के अधिकार में स्थित 'रात्सस्य' सूत्र से रेफ

से उत्तर संयोगान्त में स्थित 'स्' का लोप, 'पितुर्' पूर्ववत् 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से अवसान में स्थित रेफ को विसर्ग होकर 'पितुः' रूप सिद्ध होता है।

14) पितृभ्याम् – ऋकारान्त पितृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्याम्' प्रत्यय होकर 'पितृभ्याम्' रूप सिद्ध होता है।

15) पितृभ्यः –ऋकारान्त पितृ शब्द से पञ्चमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'भ्यस्' प्रत्यय, 'पितृ भ्यस्' इस स्थिति में ससजुषो रुः' से सकार के स्थान पर रुत्व तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'पितृभ्यः' रूप सिद्ध होता है।

16) पितुः – ऋकारान्त पितृ शब्द से षष्ठी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ङस्' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ अस्' इस स्थिति में 'ऋ उत्' से पूर्ववत् उकार आदेश, 'उरण रपरः' से रपर होकर 'उर्' आदेश हुआ। 'पितुर् स्' इस अवस्था में 'पदस्य' के अधिकार में 'रात्सस्य' से संयोगान्त में स्थित 'स्' का लोप तथा पूर्ववत् विसर्ग कार्य होकर 'पितुः' रूप सिद्ध होता है।

17) पित्रोः – ऋकारान्त पितृ शब्द से षष्ठी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'पितृ ओस्' इस स्थिति में 'इकोयणचि' से यणादेश, 'स्थानेऽन्तरतमः' से 'ऋ' के स्थान पर सदृशतम 'र्' आदेश करके वर्णसंयोग करने पर 'पित्रोस्' बना। पूर्ववत् विसर्ग कार्य होकर 'पित्रोः' रूप सिद्ध होता है।

18) पितॄणाम् – ऋकारान्त पितृ शब्द से षष्ठी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से 'आम्' प्रत्यय, 'पितृ आम्' इस स्थिति में 'ह्रस्वनद्यापो नुट्' से आम् को नुट् आगम, 'आद्यन्तौ टकितौ, से नुट् के टित् होने से 'आम्' के आदि में होकर 'पितृ नुट् आम्' इस अवस्था में उ तथा ट् की पूर्ववत् इत् संज्ञा एवं लोप, 'नामि' से नाम् परे रहते अजन्त अङ्ग को दीर्घ तथा 'ऋवर्णान्तस्य णत्व वाच्यम्' इस वार्तिक से न को णत्व होकर 'पितॄणाम्' रूप सिद्ध होता है।

19) पितरि – ऋकारान्त पितृ शब्द से सप्तमी विभक्ति एकवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्. ' सूत्र से ङि' प्रत्यय, पूर्ववत् अनुबन्ध लोप, 'पितृ इ' इस स्थिति में 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से ऋदन्त अङ्ग को गुण तथा 'उरण रपरः' से रपर होकर 'पितरि' रूप सिद्ध होता है।

20) पित्रोः – ऋकारान्त पितृ शब्द से सप्तमी विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से 'ओस्' प्रत्यय, 'पितृ ओस्' इस स्थिति में पूर्ववत् 'इकोयणचि' से यणादेश तथा विसर्ग कार्य करने पर 'पित्रोः' रूप सिद्ध होता है।

21) पितृषु – ऋकारान्त पितृ शब्द से सप्तमी विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'सुप्' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर 'पितृ सु' इस स्थिति में 'आदेश प्रत्यययोः' सूत्र से 'इण्' (ऋ) से परे प्रत्यय के अवयव अपदान्त सकार को मूर्धन्य आदेश प्राप्त हुआ, 'स्थानेऽन्तरतमः' से सदृशतम षकार आदेश होकर 'पितृषु' रूप सिद्ध होता है।

22) हे पितः! – ऋकारान्त पितृ शब्द से 'ङ्याप्प्रातिपदिकात्' के अधिकार में 'स्वौजसमौट्.' सूत्र से स्वादि इक्कीस प्रत्यय, 'सम्बोधने च' से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति तथा 'द्वयेकयोर्द्विवचनैकवचने' से एकवचन की विवक्षा में 'सु' प्रत्यय होकर 'हे पितृ सु' इस स्थिति में 'उ' की इत् संज्ञा एवं लोप, 'सुडनपुंसकस्य' से सु की सर्वनामस्थान संज्ञा होने पर 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से सर्वनामस्थान परे ऋदन्त अङ्ग को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'पितर् स्' इस अवस्था में पूर्ववत् अपृक्त संज्ञा एवं 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' से 'स्' का लोप तथा 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' से रेफ को विसर्ग होकर 'हे पितः!' रूप सिद्ध होता है।

23) हे पितरौ! – ऋकारान्त पितृ शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति द्विवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'औ' प्रत्यय, 'हे पितृ औ' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्वनामस्थान संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण होकर 'हे पितरौ!' रूप सिद्ध होता है।

24) हे पितरः! – ऋकारान्त पितृ शब्द से सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति बहुवचन की विवक्षा में 'स्वौजसमौट्.' से 'जस्' प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, 'हे पितृ अस्' इस स्थिति में पूर्ववत् सर्वनामस्थन संज्ञा एवं 'ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः' से 'ऋ' को गुण, 'उरण रपरः' से रेफ सहित 'अर्' गुण तथा विसर्ग कार्य करने पर 'हे पितरः!' रूप सिद्ध होता है।

ऋकारान्त पुल्लिङ्ग पितृ शब्द

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितरः
द्वितीया	पितरम्	पितरौ	पितॄन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
चतुर्थी	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पञ्चमी	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
षष्ठी	पितुः	पित्रोः	पितॄणाम्
सप्तमी	पितरि	पित्रोः	पितृषु
सम्बोधन	हे पितः!	हे पितरौ!	हे पितरः!

2.6 विशेष नियम, अपवाद, वार्तिक

अन्य इकाइयों की तरह इस इकाई में भी अनेक विषय यथावत् होते हैं, जैसे प्रातिपदिक संज्ञा, सुप् प्रत्ययों की उत्पत्ति, उनकी विभक्ति एवं वचन संज्ञा करना, अपेक्षित विभक्ति एवं वचन के प्रत्यय को लाना एवं उस प्रत्यय को प्रातिपदिक के साथ जोड़ना इत्यादि। साधु और पितृ से सम्बद्ध व्याख्येय सूत्रों और रूप सिद्धियों में भी संज्ञा सूत्र, परिभाषा सूत्र, अधिकार नियम और अपवाद सूत्रों की प्रसंगवश चर्चा की गयी है। निर्धारित मापदण्डों के अनुसार

अनुबन्धों की इत्संज्ञा करना, इत्संज्ञा का निषेध, सुप् प्रत्ययों के स्थान पर होने वाले आदेश या एकादेश यथास्थान समझने का प्रयास करें।

संज्ञासूत्र– यहाँ पर पूर्व की इकाइयों में आयी इत्, प्रातिपादिक, प्रत्यय, गुण, वृद्धि आदि संज्ञाओं की चर्चा नहीं की गयी है परन्तु उनका प्रयोग यहाँ भी यथावत् होगा। यहाँ 'शेषोघ्यसखि' से घि संज्ञा, 'अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा' से उपधा संज्ञा एवं 'अपृक्त एकाल्प्रत्यय' से अपृक्त संज्ञा की चर्चा की गयी है। सूत्र व्याख्या में इन्हें सोदाहरण स्पष्ट किया गया है।

अपवाद एवं निषेध सूत्र– साधु शब्द के प्रसंग में – साधु शब्द की सिद्धियों में भी अन्य पूर्ववर्ती रूपसिद्धियों की तरह अपवाद सूत्रों का प्रयोग हुआ है। साधु औ में यणादेश प्राप्त था, अपवाद सूत्र 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्वसवर्ण दीर्घ होकर साधू रूप बनता है। इसी तरह साधून् में भी द्रष्टव्य है। साधु जस् में यण् प्राप्त है परन्तु 'जसि' से अपवाद रूप गुण का विधान है। साधु अम् में यणादेश प्राप्त है, अपवाद रूप 'अमि पूर्वः' से पूर्वरूप एकादेश होता है। साधु टा में यणादेश प्राप्त है परन्तु 'आङो नाऽस्त्रियाम्' से टा को ना आदेश किया गया है। इसी तरह 'साधु ङे, साधु ङसि/ङस् साधु आम्, साधु ङि में भी यण् प्राप्त था जिनमें अपवाद रूप अनेक कार्यों का विधान किया गया है।

पितृ शब्द के विशेष प्रसंग में –

पितृ औ, पितृ जस्, पितृ आम्, पितृ ङि में भी यणादेश प्राप्त है परन्तु अपवाद स्वरूप उन–उन स्थलों में गुण, पूर्वरूप, पूर्वसवर्ण दीर्घ आदि अनेक कार्यों का विधान किया गया है। पितृणाम् में यणादेश प्राप्त था, नुट् का आगम करके उसे रोका गया है। पितृणाम् णत्व प्राप्त नहीं था परन्तु 'ऋवर्णान्तस्य णत्व वाच्यम्' वार्तिक से णत्व का विधान किया गया है। पितृ ङसि/ङस् में स् को रुत्व, विसर्ग प्राप्त था परन्तु वहाँ 'रात्सस्य' से स् का लोप किया गया है। इस प्रकार कुछ अपवाद विशेष उल्लेख हैं।

2.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने से आप जान चुके हैं कि उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु एवं ऋकारान्त पुँल्लिङ्ग पितृ के रूप कैसे सिद्ध होते हैं। इकाई में दोनों शब्दों की रूप रचनाओं को बहुत स्पष्टता के साथ समझाया गया है। इन दो शब्दों की रूप रचनाओं से सम्बद्ध विशेष सूत्रों की विधिवत् व्याख्या प्रदर्शित की गयी है। साधु के शब्द सन्दर्भ में पूर्व इकाई में प्रदर्शित हरि शब्द की रूप रचना को ठीक से समझना अपेक्षित है क्योंकि इकारान्त पुँल्लिङ्ग हरि और उकारान्त पुँल्लिङ्ग साधु शब्द की रूप रचना में बहुत अधिक समानता यदि आप सुबन्त प्रकरण की सभी इकाइयों में प्रदर्शित विशेष व्याख्येय सूत्रों को बहुत अच्छी तरह से समझ लें, तो ऐसा करने से सूत्रों के प्रयोग स्थलों को आप ठीक से समझ पायेंगे।

2.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) लघुसिद्धान्त कौमुदी – वरदराज आचार्य विरचित

2) टीकाएं : 1. भीमसेन शास्त्री

2. धरानन्द शास्त्री
3. गोविन्द प्रसाद शर्मा
4. सत्यापाल सिंह

प्रथमवृत्ति – ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

2.9 अभ्यास प्रश्न

1) **'तस्माच्छसो नः पुंसि'** सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2) 'पितरौ' पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए।
3) **'ऋत उत्'** सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4) 'साधोः' पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया लिखिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY